जैन साहित्य में गाणितिक संकेतन

Mathematical Notations

—डा० मुकुटबिहारीलाल अग्रवाल, एस-सी०, पी-एच० डी०

[जैन तत्त्वविद्या में 'गणितानुयोग' एक स्वतन्त्र अनुयोग (विषय) है। प्राचीन जैन मनीषी आत्मा-परमात्मा आदि विषयों पर गणित की भाषा में किस प्रकार विश्लेषण करते थे, उनकी शैली, उनके संकेतन आदि के सम्बन्ध में गणित के प्रसिद्ध विद्वान् तथा लेखक डा० अग्रवाल का यह लेख एक नये विषय पर प्रकाश डालता है।]

पूर्वाभास—मानवीय जीवन में संकेत की महत्ता प्रायः देखी जाती है। भाषा ने जब तक शब्दों की पकड़ नहीं की थी तब भी अभिव्यक्ति (Expression) होती रहती थी। यह अभिव्यक्ति केवल संकेतों के कारण ही थी—यह सर्वविदित ही है। यदि कहा जाये कि भाषा का जन्म ही संकेतों से हुआ है तो असंगति न होगी। जीवन में गणित का अपना विशिष्ट महत्व है, क्योंकि मानव अपनी आँखें खोलते ही गण (गिनना) के चक्कर में फँस जाता है। यह चक्कर इतना सरल तो नहीं है कि वह आसानी से समझ सके। परन्तु कुछ ऐसे साधन हैं जो इस कार्य को सरल बना देते हैं; वे हैं गाणितिक संकेत अर्थात् गणित सम्बन्धी संकेत। इसी गाणितिक सांकेतिकता के विकास पर विचार करना अपना परम लक्ष्यमय कर्त्तव्य है।

ये वे संकेत होते हैं जो किसी गणित सम्बन्धी क्रिया को व्यक्त करने में, किसी गणितीय राशि को दर्शाने में अथवा गणित में प्रयुक्त होने वाली गणितीय राशि को निर्दिष्ट करने के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं। यथा $a \div b$ में, भाग का चिह्न ($\div$) निर्दिष्ट करता है कि a में b का भाग देना है। $a < b$ में, असमता का चिह्न $<$ a का b से छोटे होने का सम्बन्ध दर्शाता है। इन संकेतों की सहायता से गणित के तर्क संक्षिप्त रूप से लिखे जा सकते हैं और पाठक सूक्ष्म तर्क-संगत भाषा की सहायता से जटिल सम्बन्धों को सरलता से समझ लेता है।

प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों में विभिन्न प्रकार के संकेत मिलते हैं; किन्तु समय के साथ उन सब में परिवर्तन हुए और वे अनेक रूपान्तर के बाद वर्तमान रूप में आये।

धन और ऋण के चिह्न—सन् १४६० ई० लगभग बोहीमिया के एक नगर में जॉन विड्मैन नामक एक गणितज्ञ हुआ है। विदेशियों में सबसे पहले इसी ने + और — चिह्नों का प्रयोग किया है। परन्तु इसने इन संकेतों को जोड़ने और घटाने के अर्थ में प्रयोग नहीं किया था। वरन् वह ये संकेत व्यापारिक बण्डलों पर डाला करता था यह दिखाने के लिए कि अमुक बण्डल किसी निश्चित मात्रा से अधिक है या कम।

प्राचीन भारतीय ग्रन्थों को देखने से मालूम होता है कि भारतवर्ष में भी जोड़ने-घटाने आदि को सूचित करने के लिए संकेतों का प्रयोग होता था। वे संकेत या तो प्रतीकात्मक हैं या चिह्नात्मक।

जोड़ने के लिए संकेत—'बक्षाली हस्तलिपि' में जो ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों का ग्रन्थ है जोड़ने के लिए 'युत' शब्द का प्रथम अक्षर 'यु' मिलता है। यह अक्षर 'यु' जोड़ी जाने वाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्या के अन्त में लिखा जाता था। जैसे ४ और ६ जोड़ने होते थे तो इस प्रकार लिखा जाता था—

$$\begin{matrix} ४ & & ६ & \\ १ & & १ & यु \end{matrix}$$

'बक्षाली हस्तलिपि' में पूर्णांक लिखने की यह पद्धति थी कि अङ्क के नीचे १ लिख दिया जाता था, किन्तु दोनों के बीच भाग रेखा नहीं लगाई जाती थी।

जैन ग्रन्थ 'तिलोयपण्णत्ति' (ईसा की दूसरी शताब्दी का ग्रन्थ) में जोड़ने के लिए 'धण' शब्द लिखा है क्योंकि प्राचीन साहित्य में धन के लिए 'धण' शब्द प्रयोग होता था।

जोड़ने के लिए पं० टोडरमल ने 'अर्थसंदृष्टि' में — चिह्न का प्रयोग किया है। यथा $\log_2 \log_2$ (अं)+१ के लिए उसमें इस प्रकार लिखा है[1]—

$$\begin{matrix} १— \\ व_२ \end{matrix}$$

जोड़ने के लिए, विशेषकर भिन्नों के योग में, 'अर्थसंदृष्टि' में खड़ी लकीर का प्रयोग मिलता है।[2] यथा

१ | $\frac{१}{२}$ का आशय १ + $\frac{१}{२}$ से है।

घटाने के लिए संकेत—'बक्षाली हस्तलिपि' में घटाने के लिए + संकेत का प्रयोग किया गया है। यह + चिह्न उस अङ्क के बाद लिखा जाता था जिसे घटाना होता था। जैसे २० में से ३ घटाने के लिए इस प्रकार लिखा जाता था—

$$\begin{matrix} २० & & ३+ \\ १ & & १ \end{matrix}$$

कुछ जैन ग्रन्थों में भी घटाने के लिए उपरोक्त संकेत का प्रयोग मिलता है परन्तु यह + चिह्न घटायी जाने वाली संख्या के ऊपर लिखा जाता था। आचार्य वीरसेन ने 'धवला' (ईसा की नवीं शताब्दी का ग्रन्थ) में इस प्रकार के संकेत का प्रयोग किया है जो निम्नलिखित उदाहरण से स्पष्ट है[3]—

"............|१| $\overset{+}{\underset{।}{}}$ **सोज्झ माणादो एदिस्से रिण सण्णा**"

अर्थात् १ $\overset{+}{\underset{।}{}}$ शोध्यमान (अर्थात् घटाने योग्य) होने से इसकी ऋण संज्ञा है।

घटाने के लिए + चिन्ह की उत्पत्ति के बारे में प्रोफेसर लक्ष्मीचन्दजी जैन का मत है कि यह चिन्ह ब्राह्मी भाषा से बना है। ब्राह्मी भाषा में ऋण के लिए 'रिण' लिखा जाता है और रिण का प्रथम अक्षर रि ब्राह्मीभाषा में   लिखा जाता है। अधिक प्रयोग होते-होते इसका रूप + हो गया है।

जैन ग्रन्थों में घटाने के लिए   चिन्ह भी मिलता है। यह चिन्ह जिस अङ्क को

---

१ पं० टोडरमल की अर्थसंदृष्टि, पृष्ठ ६, ७, ८, १५, १८, २०, २१

२ अर्थसंदृष्टि, पृष्ठ ११

३ धवला, पुस्तक १०, सन् १९५४, पृष्ठ १५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घटाना होता था उसके बाद लिखा जाता था।[४] यथा

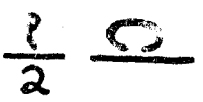

का आशय जघन्य युक्त असंख्येय —१ से है। यहाँ पर २ का आशय जघन्य युक्त असंख्येय से है।

'अर्थसंदृष्टि' में इसी प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं।[५] यथा—यदि ल।५।४।३ का आशय ल × ५ × ४ × ३ अर्थात् ६० लाख से है और १ लाख इस राशि में से घटाया जावे तो शेषफल को इस प्रकार लिखते हैं—

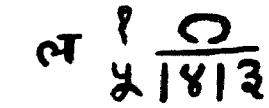

'त्रिलोकसार' (दशवीं शताब्दी का जैन ग्रन्थ) में भी घटाने के लिए इसी प्रकार का संकेत मिलता है। इसमें लिखा है कि मूलराशि के ऊपर घटाई जाने वाली संख्या लिखो और उसके आगे पूछड़ी का सा आकार बिन्दी सहित करो जैसे २०० में से २ घटाने के लिए इस प्रकार लिखा है[६]—

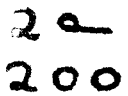

घटाने के लिए संकेत भी जैन ग्रन्थों में प्रयोग किया गया है। यथा १ करोड़ में से २ घटाने के लिए इस प्रकार लिखा है[७]—

घटाने के लिए उपरोक्त चिन्ह ई० पू० तीसरी शताब्दी में भी दृष्टिगोचर होता है।[८]

कहीं-कहीं घटाने के लिए ० संकेत का भी प्रयोग किया गया है। पं० टोडरमलजी ने इस संकेत का प्रयोग इस प्रकार किया है—

---

४ अर्थसंदृष्टि, पृष्ठ ४; तिलोयपण्णत्ति, भाग २, पृष्ठ ६०६, ७१७

५ वही, पृष्ठ २०

६ त्रिलोकसार, परिशिष्ट, पृष्ठ २

७ अर्थसंदृष्टि, पृष्ठ ६

८ गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा, भारतीय प्राचीनलिपि माला १९५९, प्लेट १

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

०
१
को

इसका आशय १ करोड़ —१ है।
एक करोड़ में से २ घटाने के लिए इस प्रकार भी लिखा है—

को ०
२

घनलोक में से २ घटाने के लिए इस प्रकार लिखा है—

०
२
≡

यहाँ पर संकेत ≡ घनलोक के लिए प्रयोग किया गया है।
एक लाख में से १ घटाने के लिए इस प्रकार लिखा है[९]—

ल
०
१

'त्रिलोकसार' में भी घटाने के लिए उपरोक्त चिन्ह ० मिलता है। उसमें लिखा है कि मूल राशि (जिसमें से घटाना हो) के नीचे बिन्दी लिखो और फिर बिन्दी के नीचे ऋण राशि (घटाई जाने वाली संख्या) लिखो। यथा यदि २०० में से २ घटाने हों तो इस प्रकार लिखते हैं[१०]—

२००
०
२

घटाने के लिए ⌣ तथा) संकेतों का प्रयोग भी पं० टोडरमल ने 'अर्थसंदृष्टि' में किया है। जैसे एक लाख में से ५ घटाने के लिए इस प्रकार लिखा है[११]—

ल⌣५ तथा ल
५)

घटाने के लिए संकेत के स्थान पर ऋण शब्द का प्रतीकात्मक प्रथम अक्षर भी प्रयोग किया गया है। प्राचीन साहित्य में ऋण के लिए रिण लिखा जाता था। अतः घटाने के लिए 'रि' और कहीं-कहीं 'रिण' का प्रयोग होता था। परन्तु यह अक्षर, जिस अङ्क को घटाना होता था, उसके बाद में लिखा जाता था। 'तिलोयपण्णत्ति' में ऐसे उदाहरण अनेक जगह मिलते हैं।[१२] यथा—

---

९ अर्थसंदृष्टि, पृष्ठ ६
१० त्रिलोकसार, परिशिष्ट, पृष्ठ २
११ अर्थसंदृष्टि, पृष्ठ ६
१२ तिलोयपण्णत्ति, भाग १, पृष्ठ २०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४$^{-३}$ | रि० यो० १००००० | ^{३}

अर्थात्—मध्यलोक के ऊपरी भाग से सौधर्म विमान के ध्वजदण्ड तक १ लाख योजन कम डेढ़ राजू ऊँचाई प्रमाण है। इसमें स्पष्ट है कि 'रि०' का आशय यहाँ पर घटाने से है। यहाँ १४$^{-३}$ का अर्थ डेढ़ राजू से है।

गुणा के लिए संकेत—गुणा के लिए 'बक्षाली हस्तलिपि' में 'गु' संकेत का प्रयोग मिलता है। यह संकेत 'गु' शब्द 'गुणा' अथवा 'गुणित' का प्रथम अक्षर है। यथा—[13]

३	३	३	३	३	३	३	१०	गु
१	१	१	१	१	१	१	१	

इसका आशय ३ × ३ × ३ × ३ × ३ × ३ × ३ × १० है।

'तिलोयपण्णत्ति' में गुणा के लिए एक खड़ी लकीर का प्रयोग किया गया है। यथा १००० × ६६ × ५०० × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ के लिए इस प्रकार लिखा है।[14]

$०।६६।५००।८।८।८।८।८।८।८।८।

यहाँ पर $० का आशय १००० है।

'अर्थसंदृष्टि' में भी गुणा के लिए यही चिह्न मिलता है। यथा— १६ को २ से गुणा करने के लिए १६।२ लिखा है।[15]

'त्रिलोकसार' में भी गुणा के लिए यही चिह्न मिलता है। यथा— १२८ को ६४ से गुणा करने के लिए १२८।६४ लिखा है।[16]

भाग के लिए संकेत—भाग के लिए 'बक्षाली हस्तलिपि' में 'भा' संकेत का प्रयोग मिलता है। यह संकेत 'भा' शब्द 'भाग' अथवा 'भाजित' का प्रथम अक्षर है। यथा—[17]

इसका आशय

४० भा	१६०	१३
१	१	१
		२

इसका आशय

$$\frac{१६०}{१} \times १३\frac{१}{२} \div \frac{४०}{१}$$ से है।

भिन्नों को प्रदर्शित करने के लिए प्राचीन जैन साहित्य में अंश और हर के बीच रेखा का प्रयोग नहीं मिलता है। 'तिलोयपण्णत्ति' में बेलन का आयतन मालूम किया है जो $\frac{१९}{२४}$ आया है। इस $\frac{१९}{२४}$ को इस ग्रन्थ में इस प्रकार लिखा है[18]—

१९
२४

---

१३ बक्षाली हस्तलिपि Folio 47, recto

१४ तिलोयपण्णत्ति, भाग १, गाथा १, १२३-१२४

१५ अर्थसंदृष्टि, पृष्ठ ६

१६ त्रिलोकसार, परिशिष्ट, पृष्ठ ३

१७ बक्षाली हस्तलिपि Folio 42, recto

१८ त्रिलोयपण्णत्ति, भाग १, गाथा १, ११८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'त्रिलोकसार' में भी इसी प्रकार के उदाहरण उपलब्ध होते हैं। इसमें लिखा है कि इक्यासी सौ बाणवें का चौंसठवाँ भाग इस प्रकार लिखिये[१९]—

८१९२
६४

'त्रिलोकसार' में भाग देकर शेष बचने पर उसको लिखने की विधि का भी उल्लेख किया है, जो आधुनिक विधि से भिन्न है। यथा ८१९४ में ६४ का भाग दें तो १२८ बार भाग जावेगा और २ शेष रहेंगे। अर्थात् १२८ $\frac{२}{६४}$ को इस ग्रन्थ में इस प्रकार लिखा है[२०]—

१२८।२
६४

शून्य का प्रयोग—० का प्रयोग आदि संख्या के रूप में प्रारम्भ नहीं हुआ अपितु रिक्त स्थान की पूर्ति हेतु प्रतीक के रूप में प्रयोग हुआ था। आधुनिक संकेत लिपि में जहाँ ० लिखा जाता है वहाँ पर प्राचीनकाल में ० संकेत न लिखकर उस स्थान को खाली छोड़ दिया जाता था। जैसे ४६ का अर्थ होता था छियालीस और ४ ६ का अर्थ होता था चार सौ छः। यदि दोनों अंकों के मध्य जितना उपयुक्त स्थान छोड़ना चाहिए उससे कम छोड़ा जाता था तो पाठकगण भ्रम में पड़ जाते थे कि लेखक का आशय ४६ से है अथवा ४०६ से। इस भ्रम को दूर करने के लिए उस संख्या को ४ ६ न लिखकर ४.६ के रूप में अंकित किया जाने लगा। धीरे-धीरे इस प्रणाली का आधुनिक रूप ४०६ हो गया।

इस प्रकार के प्रयोग का उल्लेख प्राचीन जैन ग्रन्थों एवं मन्दिरों आदि में लिखा मिलता है। उदाहरणार्थ आगरा के हींग की मण्डी में गोपीनाथ जी के जैन मन्दिर में एक जैन प्रतिमा है जिसका निर्माण काल सं० १५०९ है, परन्तु इस प्रतिमा पर इसका निर्माण काल १५०९ न लिखकर १५ ९ लिखा है।

वर्ग के लिए चिह्न—किसी संख्या को वर्ग करने के लिए 'व' चिह्न मिलता है। यह चिह्न 'व' उस संख्या के बाद लिखा जाता है, जिसका वर्ग करना होता है। यथा 'ज जु अ' एक संख्या है जिसका अर्थ जघन्य युक्त अनन्त है। यदि इसका वर्ग करेंगे तो उसे इस प्रकार लिखेंगे[२१]—

ज जु अ व

इसी प्रकार घन का संकेत 'घ', चतुर्थ घात के लिए 'व-व' (वर्ग-वर्ग), पाँचवीं घात के लिए 'व-घ-घा' (वर्ग घन घात), छठवीं घात के लिए 'घ-व' (घन वर्ग), सातवीं घात के लिए 'व-व-घ-घा' (वर्ग वर्ग घन घात) आदि संकेत उपलब्ध होते हैं।

वर्गित-संवर्गित के लिये चिह्न—वर्गित-संवर्गित शब्द का तात्पर्य किसी संख्या का उसी संख्या तुल्य घात करने से है। जैसे ५ का वर्गित-संवर्गित $५^{५}$ हुआ। जैन ग्रन्थों में इसके लिये विशेष चिह्न प्रयोग किया है। किसी संख्या को प्रथम बार वर्गित-संवर्गित करने के लिए इस प्रकार लिखा जाता है—

---

१९ त्रिलोकसार, परिशिष्ट, पृष्ठ ५

२० वही, परिशिष्ट, पृष्ठ ६

२१ अर्थसंदृष्टि, पृष्ठ ५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसका आशय है $न^{न}$ से है। द्वितीय वर्गित-संवर्गित के लिए इस प्रकार लिखा जाता है।

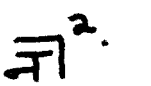

इसका आशय न को वर्गित-संवर्गित करके प्राप्त राशि को पुनः वर्गित-संवर्गित करना है। अर्थात् $\left(न^{न}\right)^{न^{न}}$ है। जैसे २ का द्वितीय वर्गित-संवर्गित $\left(२^{२}\right)^{२^{२}}$ हुआ। अतः 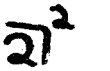 $४^{४}=२५६$ हुआ।

द्वितीय वर्गित-संवर्गित राशि को पुनः एक बार वर्गित-संवर्गित करने पर तृतीय वर्गित-संवर्गित प्राप्त होता है। २ के तृतीय वर्गित-संवर्गित को 'धवला' में इस प्रकार लिखा है[२२]—

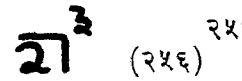

वर्गमूल के लिए संकेत—'तिलोयपण्णत्ति' और 'अर्थसंदृष्टि' आदि में वर्गमूल के लिए 'मू०' का प्रयोग किया है। 'तिलोयपण्णत्ति' के निम्नलिखित अवतरण में 'मू०' संकेत वर्गमूल के लिए दृष्टिगोचर होता है।[२३]

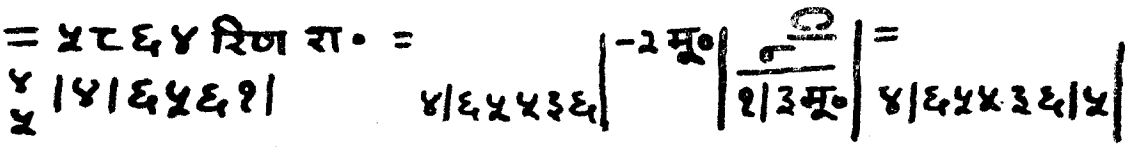

पं० टोडरमल की 'अर्थसंदृष्टि' में 'के मू$_{१}$' प्रथम वर्गमूल और 'के मू$_{२}$' वर्गमूल के वर्गमूल के लिए प्रयोग किया गया है।

संकेत 'मू०' मूल अर्थात् वर्गमूल शब्द का प्रथम अक्षर है। इस संकेत को उस संख्या के अन्त में लिखा जाता था जिसका वर्गमूल निकालना होता था। 'बक्षाली हस्तलिपि' में भी 'मू०' का प्रयोग मिलता है जो निम्न उदाहरण से स्पष्ट है[२४]—

११	यु०	५	मू०	४
१		१		१

---

२२ धवला, पुस्तक ३, अमरावती १९४१, परिशिष्ट पृ० ३५

२३ तिलोयपण्णत्ति, भाग २, पंचम अधिकार, पृष्ठ ६०९

२४ Bulletin of Mathematical Society, Calcutta, Vol. 21, 1929 पत्रिका में प्रकाशित विभूतिभूषणदत्त का 'बक्षाली गणित' पर लेख, पृष्ठ २४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org